समकालीन स्त्री विमर्श में मैत्रेयी पुष्पा का योगदान

शिखा तिवारी (गोल्ड मेडलिस्ट)

शोध–छात्रा (हिन्दी)
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
Mail Id- shikhat521@gmail.com

हिन्दी में समकालीन साहित्य का सृजन सन् 1980 से माना जाता है, किन्तु इसकी पृष्ठभूमि 7वें दशक से निर्मित होने लगी थी। स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान ढेरों महिला लेखिकाएं आगे आयी, परन्तु बदलाव की कुछ विशेष बातें दृष्टिगत नहीं हुई। दरअसल किसी भी तरह के लेखन के लिए ज्वालामुखी जैसी परिस्थितियां होनी चाहिए। लावों को निकालने के लिए छोटा ही सही पर मुहाना होना चाहिए। इसकी असली जमीन तैयार की समाज की विसंगतियों ने। ''ऐसी विसंगतियां जिसमें एक स्त्री सिर्फ भोग्या थी, उसके रिश्ते–नाते, नैतिक मूल्य और संवेदनाएँ सब कुछ बाजारू।''

इन सब कारकों ने मिलकर महिलाओं को उद्वेलित किया और रचना धर्मिता के लिए बेहतर जमीन तैयार की। यानी सकारात्मक–नकारात्मक दोनों पहलू महिला लेखिकाओं के लिए समान रूप से लाभप्रद रहें।

इस लेखन में उनके अन्तर्विरोध है, उनके जीवन की टूटी हुई लय है, उसका यथार्थ है ''स्त्री विमर्श जनांतिक मूल्यों का मानवाधिकारों का लेखन है। यह लेखन स्त्रियों के हर तरह के भेद–भाव के दमन और अन्याय के खिलाफ है इसमें कहीं स्त्रियों की यथार्थता है तो कहीं इनकी संवेदनाएँ।''

जब भी ''मैत्रेयी जी'' के ग्रामीण पात्रों के संघर्ष की तरफ दृष्टि जाती है तो 'द्वितीय सप्तक (1951)' के कवि 'रघुवीर सहाय' की वह काव्य पंक्ति जिसमें घरेलू महिलाओं की वेदना को अभिव्यक्त किया है, का उल्लेख सार्थक प्रतीत होता है।

पढ़िये गीता
बनिए सीता
फिर इन सब में लगा पलीता
किसी मूर्ख की बन परणीता
निज घर बार बसाइए
होंय कटीली
आंखे गीली
लकड़ी सीली, तबियत ढीली

Scanned with CamScanner

घर की सबसे बड़ी पतीली
भर कर भात पसाइए।''[1]

रचनाकार अपने आस–पास जो देखते है, जिस समाज में रहते है, उस समाज में उस युग की व्याप्त विषमताओं को केन्द्र में रखकर ही लेखनी चलाता है और अपनी लेखनी से समाज को एक नई प्रेरणा देता है। हमारे हिन्दी जगत मे भी ऐसे प्रतिबद्ध संकल्पित रचनाकारों की कमी नहीं रही स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् खासकर साठोत्तरी युग में महिला रचनाकारों ने इस परम्परा में अपना योगदान दिया। इसी परम्परा की एक सार्थक कड़ी है– 'मैत्रेयी पुष्पा जी'।

'मैत्रेयी जी' का समस्त साहित्य 'स्त्री संघर्ष और स्वतन्त्रता' का प्रेरक है। 'मैत्रेयी जी' ने पराधीनता को करीब से देखा ही नही स्वयं अनुभव भी किया। इस बात की पुष्टि इस कथन से होता है– ''सन् 1947 में जो आजादी मिली वह स्त्रियों की आजादी हरगिज नही हो सकती बल्कि हमें गुलाम बनायें रखने वाले गुलाम अब आजाद होकर और भी बर्बर हो गये। उन्होंने हमारी अयोग्यता सिद्ध करने के लिए छल–बल का प्रयोग किया।''[2]

रचनाकार अपने आस–पास जो देखते है, व जिस समाज में रहते है, उस समाज में उस युग की व्याप्त विषमताओं को केन्द्र में रखकर ही लेखनी चलाता है और अपनी लेखनी से समाज को एक नई प्रेरणा देता है।

'मैत्रेयी जी' का जीवन बड़ा ही संघर्षशील रहा, अपने द्वारा उठायी गयी कठिनाईयों से वे कभी अलग नही हो पायी। इतने वर्षों से जो उमड़–घुमड़ रहा था, कलम का सहारा लेकर बरस पड़ा। तभी तो वे लिखती है–

''मैंने साहित्य की लुकाठी के साथ खड़ा होना चाहा था, क्योंकि इस क्षेत्र में स्त्री उत्कर्ष की बातें जोर–शोर से होती है।''[3]

अपने नारी पात्रों के माध्यम से उन्होंने 'स्त्री स्वतन्त्रता' के समर्थक के रूप में परिचय दिया है। उनके अर्द्ध शिक्षित, अशिक्षित नारी पात्र भी अपने अधिकार तथा स्वतन्त्रता के प्रति सचेत है– ''**मुझे गर्व है उस औरत पर जो अनपढ़ होकर भी बुद्धिमान, साधन विपन्नता झेलते हुए भी स्नेहमयी, गूंगी होकर भी कर्मशील, असभ्य कहलाकर भी सत्यनिष्ठ और सब तरफ से घिरी होकर भी मुक्त होने के लिए कटिबद्ध है।''[4]**

'मैत्रेयी जी' ने मुख्य रूप से अपने साहित्य के माध्यम से पुरूष सत्तात्मक व्यवस्था में स्त्री की स्थिति को उजागर किया है। यद्यपि ये 'प्रेमचन्द्र, 'रेणु', 'भगवती शरण उपाध्याय' आदि रचनाकारों से भी प्रभावित रही, परन्तु कतिपय विद्वान इनको रेणु और प्रेमचन्द्र परम्परा का अनुयायी समझने की भूल कर दिये। 'मैत्रेयी जी' ने साफ कह दिया– **''प्रेमचन्द्र, रेणु हो या जैनेन्द्र हो अपने समय को अपने ढंग से समझ रहे थे। मुझे लगा स्त्रियों की दुनिया को मानचित्र, त्याग और समर्पण का ऐसा दल–दल बना दिया है कि जिसमें स्त्री धंसती चली जाती है। यदि सतह पर कुछ दिखाई देता है तो वह है उसके पवित्र आचरण, शील और आत्मसंहार की झंडी।''[5]**

Scanned with CamScanner

'मैत्रेयी पुष्पा जी' ने स्त्री समस्याओं को बड़े ही कुशलतापूर्वक ढंग से व्यक्त किया है लेकिन साहित्य जगत से 'मैत्रेयी जी' को जितना यश मिला उतना ही अपयश, लेकिन इन्होंने हर बार कुछ नया लिखकर साहित्य जगत को चकित कर दिया। जो इनके साहित्य को नैतिकता और अनैतिकता के खांचे में डालकर परखना चाहते है उनके लिए इनका– **'साहित्य का लक्ष्य है आनन्द'** नामक लेख पर्याप्त है–

''यह सवाल नहीं है बल्कि देखी–जानी बात है कि जनता की शक्ति में आस्था रखना पुराना विचार हो गया है, इसलिए जर्जर भी हो गया है। नृशंस हत्याओं के खूनी दलदल, औरतों की चीखें खाक होती बस्तियां और उनकी चीखें–कराहें साहित्यकारों को अब उद्वेलित नहीं करती, तो किसान, मजदूर और स्त्रियों के हक की बात करना ही बेमानी है।''[6]

'मैत्रेयी जी' उन समस्त लेखकों के प्रति रोष व्यक्त करती है जो आदर्शवादी साहित्य रचना में वास्तविकता को पाठक के सामने लाने में परहेज करते है। 'मैत्रेयी जी' के इसी दृष्टिकोण ने इन्हें– **'कस्तूरी कुण्डल बसे (2002), न्हिार (1991), लालमनियां (1996), गोमा हंसती है (1998), स्मृतिदर्श (1990), चॉक (1997), अगनपाखी (2001), खुली खिड़कियां (2001)** इत्यादि विधाओं कहानी, आत्मकथा, उपन्यास उनके 'स्त्री विमर्श' के क्रान्तिकारी पक्ष को प्रस्तुत करते है। **'विधवा समस्या'** को उजागर करने के लिए ही इन्होंने– **'स्मृतिदंश', 'बेतवा बहती रही'** उपन्यास लिखती है। ''इनमें किसी भावुक पाठक की आंखों को अश्रुपूरित कर देने वाले अत्याचार का अंकन किया गया है।''

'चाक' उपन्यास 'स्त्री विमर्श' का सशक्त उपन्यास है, जिसका केन्द्रीय बिन्दु है 'स्त्री तथा उसकी अनगिनत यातनाएँ'। नारी यातना सभी युग, सभी जाति–वर्ग, समाज की स्त्रियों का ऐसा कटु सत्य है कि इसमें स्त्रियों का बचना मुश्किल हो जाता है।

''किन्तु आज की स्त्रिया जागृत हो गयी है वे पुरूषों द्वारा किए गये जुल्मों के खिलाफ आवाज उठा सकती है, चाहे वो शिक्षित हो या अशिक्षित।'' 'मैत्रेयी जी' ने अपने दो निबन्ध संग्रहों– **'सुनो मालिक सुनो' और 'खुली खिड़कियां'** के माध्यम से समस्याओं, शोषण को वाणी देते हुए गम्भीरता से विचार करती है। 'खुली खिड़कियां' का केन्द्रीय विषय रहा है– **'स्त्री होने के कारण स्त्री का दैहिक व मानसिक शोषण हो रहा उससे वह मुक्त केसे हो ?'**

'सुनो मालिक सुनो' का सबसे सबल पक्ष यह है कि 'मैत्रेयी जी'–''स्त्री को पुरूष जैसे होने के स्थान पर समाज, परिवार तथा हर क्षेत्र में अपना स्त्रीत्व और अधिकार मांगने तथा एक स्वतन्त्र सौन्दर्यशास्त्र रचने की सलाह देती है।'' इसके प्रारम्भ में ही स्पष्ट करती है– ''अपने लेखन से मेरी पहली अपेक्षा रहती है जीवन के पक्ष में खड़ी होना जीवन जो गतिशीलता के साथ रहे।''[7]

इसी निबन्ध का 'दूसरा भाग' जिसका नामकरण– **(स्त्री मेरे पाठ में)** की है। इसमें– **'आपकी धनियां, अनुपस्थित भाषा के पात्र', 'अधंकार और रोशनी' (आलो अंधारी), 'मैं**

Scanned with CamScanner

चित्रलेखा हूं आदि लेखों का समावेश करती है, अपने क्रान्तिकारी विचारों का परिचय देते हुए कहती है–

''मेरी सीता यदि राम के साथ पत्नी बनकर जाती तो सबसे पहले उस शूर्पनखा को बचाती, जिसकी नाक उनके पति और देवर काट रहे थे। प्रणय निवेदन की सजा एक लड़की को अंग–भंग करके दे रहे थे।''[8]

'मैत्रेयी जी' के इसी प्रवृत्ति ने अपने पूर्ववर्ती रचनाकारों की रचनाओं पर पुनः विचार करने के लिए विवश किया। स्वयं के विचारों को खारिज कर पुनः लिखने की सामर्थ्य भी है उनमें, इसीलिए तो **'स्मृतिदंश'** उपन्यास को **'अगनपाखी'** और **'बेतवा बती रही'** पर **'त्रियाहठ'** लिखने में समर्थ रही।

'मैत्रेयी पुष्पा जी' भले ही साहित्य कार्य में विलम्ब से कदम रखी हो, लेकिन उनके द्वारा लिखा गया साहित्य इतना सशक्त और बेजोड़ है कि पाठक प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। **'स्त्री विमर्श'** के नये आयामों को वाणी देते हुए कहती है– **''मेरे लिए 'स्त्री विमर्श' का अर्थ स्त्री की स्वतन्त्रता, इच्छा और अस्मिता है।''**

समकालीन साहित्य में 'स्त्री विमर्श' को 'मैत्रेयी जी' ने एक नया आयाम दिया, इनकी लेखनी इनके गहन एवं गम्भीर विचारों की परिवाहक रही है।

अन्ततः हम कह सकते है 'स्त्री विमर्श' में स्त्री और पुरूष एक दूसरे के पूरक है। यदि पुरूष चाहता है कि स्त्री दुनिया का हिस्सा बने तो उसे अपनी सोच बदलनी होगी। अभी तक स्त्री ही क्यों बदलती आयी है ? कयोंकि उसमें कुछ ऐसे मानवीय गुण पाये जाते है, अतः पूर्व से ही मानवीय गुणों से ओत–पोत पुरूष में यदि आवश्यकता है तो इन मानवीय गुणों के विस्तार की और फिर सम्पूर्ण पुरूष और स्त्री के गुणों को समान रूप से देखा जाये। विचार किया जाये कि हम जमाने की दौड़ में दुनिया भी में पीछे क्यों है? कयोंकि हमने अपने आधे हिस्से को अधिकार विहीन, उपेक्षिता बनाये रखा।

नारी की शक्ति का उपयोग करके ही हम एक सजग, समाज की रचना और चहुंमुखी प्रगति कर पायेंगे और तभी 21वीं सदी में 'स्त्री विमर्श' करना सार्थक होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, बच्चन सिंह, पृष्ठ सं– 261
2 गोमा हंसती है (समय मेरे सन्दर्भ में), मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं– 13
3 वही, पृष्ठ सं– 10
4 चिन्हार (मैं सोचती हूं कि), मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं0– 143
5 विजय बहादुर सिंह, वसुधा अंक– 72, जनवरी–मार्च, पृष्ठ सं0– 116
6 वसुधा अंक– 72, जनवरी–मार्च 2007, कमला प्रसाद, पृष्ठ सं0– 115
7 सुनो मालिक सुनो, मैत्रेयी पुष्पा, पृष्ठ सं0– 23
8 सुनो मालिक सुनो (लक्ष्मण रेखा की चुनौतियां), भूमिका

Scanned with CamScanner